[2021] 1 उम. नि. प. 279

# अभिलाषा

बनाम

# प्रकाश और अन्य

[2020 की दांडिक अपील सं. 615]

15 सितम्बर, 2020

न्यायमूर्ति अशोक भूषण, न्यायमूर्ति आर. सुभाष रेड्डी और न्यायमूर्ति एम. आर. शाह

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 125 [सपठित हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 की धारा 3 और 20] – भरणपोषण – अवयस्क पुत्री द्वारा अपने पिता से भरणपोषण का दावा किया जाना – न्यायालय द्वारा उसके वयस्क होने की तारीख तक भरणपोषण मंजूर किया जाना – आवेदक-अपीलार्थी के अविवाहित रहने तक भरणपोषण मंजूर करने के दावे को नामंजूर किया जाना – हिंदू अविवाहित पुत्री अपना विवाह होने तक अपने पिता से हिन्दू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 के अधीन भरणपोषण का दावा कर सकती है, बशर्ते उसके द्वारा आवेदन अधिनियम की धारा 20(3) के अधीन किया गया हो और यह साबित किया गया हो कि वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है किंतु जहां आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अधीन किया गया हो, वहां न्यायिक मजिस्ट्रेट को हिन्दू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 के अधीन भरणपोषण मंजूर करने की अधिकारिता नहीं है ।**

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 125 – भरणपोषण – अवयस्क पुत्री द्वारा अपने पिता से भरणपोषण का दावा किया जाना – न्यायालय द्वारा उसके वयस्क होने की तारीख तक भरणपोषण मंजूर किया जाना – आवेदक-अपीलार्थी के अविवाहित रहने तक भरणपोषण मंजूर करने के दावे को नामंजूर किया जाना – वयस्क पुत्री को उसके अविवाहित रहने तक माता-पिता से भरणपोषण तभी मंजूर किया जा सकता है जब वह शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरणपोषण करने में समर्थ न हो ।**

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी की माता ने अपनी ओर से तथा अपने दो पुत्रों और अपीलार्थी-पुत्री की ओर से अपने पति के विरुद्ध अपने और अपने तीन बालकों के लिए भरणपोषण का दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने आवेदक सं. 1, 2 और 3 का आवेदन खारिज कर दिया और आवेदक सं. 4 (अपीलार्थी) के लिए उसके वयस्क होने तक भरणपोषण मंजूर करने का आवेदन मंजूर किया । न्यायिक मजिस्ट्रेट के उक्त निर्णय से व्यथित होकर चारों आवेदकों ने सेशन न्यायाधीश के न्यायालय के समक्ष एक दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया जिसे केवल इस उपांतरण के साथ खारिज कर दिया गया कि पुनरीक्षणकर्ता सं. 4 (अपीलार्थी) वयस्क हो जाने की तारीख तक भरणपोषण के लिए हकदार है । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंध के अनुसार वे बालक जिन्होंने वयस्कता प्राप्त कर ली है तब भरणपोषण के हकदार हैं, यदि किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण वे अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हैं और चूंकि पुनरीक्षणकर्ता सं. 4 (अर्थात् अपीलार्थी) किसी शारीरिक, मानसिक असामान्यता या क्षति से ग्रस्त नहीं है और इसलिए वह उसके वयस्क हो जाने तक भरणपोषण की हकदार है । सेशन न्यायाधीश तथा न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी सहित सभी आवेदकों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन फाइल किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आवेदन को खारिज कर दिया गया । अपीलार्थी द्वारा उक्त निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित** – हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 की धारा 20 में हिंदू व्यक्ति पर अपनी उस पुत्री का, जो अविवाहित है और अपनी आजीविका या अन्य संपत्ति से अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, भरणपोषण करने की बाध्यता डाली गई है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अधिनियम, 1956 के अधिनियमन से पूर्व हिंदू विधि में हिंदू व्यक्ति पर अपनी अविवाहित पुत्री, जो अपना भरणपोषण

करने में असमर्थ है, का भरणपोषण करने की सदैव बाध्यता रही है । जो बाध्यता पिता पर अपनी उस अविवाहित पुत्री का भरणपोषण करने के लिए डाली गई है, यदि वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, उस बाध्यता को पुत्री द्वारा धारा 20 के अधीन अपने अधिकार को प्रवर्तित करते हुए अपने पिता के विरूद्ध प्रवर्तित किया जा सकता है । अधिनियम, 1956 की धारा 20 के उपबंध में हिंदू पर अपनी ऐसी अविवाहित पुत्री का भरणपोषण करने की स्पष्ट कानूनी बाध्यता डाली गई है, जो अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । धारा 20 के अधीन अविवाहित पुत्री का अपने पिता से भरणपोषण का दावा करने का अधिकार, जब वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, आत्यंतिक है और धारा 20 के अधीन अविवाहित पुत्री को दिया गया अधिकार स्वीय विधि के अधीन प्रदान किया गया अधिकार है जिसे उसके द्वारा अपने पिता के विरुद्ध भली-भांति प्रवर्तित किया जा सकता है । (पैरा 28 और 31)

इस न्यायालय के समक्ष मामले में, आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम वर्ग, रेवाड़ी के समक्ष फाइल किया गया था जिसने तारीख 16 फरवरी, 2011 का आदेश पारित किया था । मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाहियों का विनिश्चय करते हुए अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) के अधीन अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकता था और अपीलार्थी की इस दलील को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि निचले न्यायालय को भरणपोषण का आवेदन मजूंर करना चाहिए था भले ही अपीलार्थी वयस्क हो गई थी । यह न्यायालय न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम वर्ग तथा विद्वान् अपर मजिस्ट्रेट के अपीलार्थी, जो वयस्क हो गई थी, को भरणपोषण मंजूर न करने के आदेश में कोई कमी नहीं पाता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का प्रयोजन और उद्देश्य आवेदक को संक्षिप्त कार्यवाहियों में तुरंत अनुतोष प्रदान करना है, जबकि अधिनियम, 1956 की धारा 3(ख) के साथ पठित धारा 20 के अधीन अधिकार में बृहत्तर अधिकार अंतर्विष्ट है जिसका सिविल न्यायालय द्वारा अवधारण करने की आवश्यकता होती है, इसलिए धारा 20 के अधीन यथा उपबंधित बृहत्तर दावों के लिए कार्यवाहियां अधिनियम की धारा 20 के अधीन आरंभ किए जाने की आवश्यकता होती है और विधानमंडल ने कभी भी मजिस्ट्रेट पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन

अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अधिनियम, 1956 द्वारा अनुध्यात दावों का अवधारण करने के लिए यह भार डालना अनुध्यात नहीं किया था । (पैरा 34 और 36)

**निर्दिष्ट निर्णय**

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [2002] | (2002) 5 एस. एस. सी. 422 : **जगदीश जुग्तावत** बनाम **मंजु लता और अन्य** ; | 4, 21, 22, 24, 31, 33 |
| [2000] | (2000) 5 एस. सी. सी. 182 : **हरियाणा राज्य और अन्य** बनाम **संतरा (श्रीमती)** ; | 26 |
| [1997] | (1997) 6 एस. सी. सी. 233 : **नूर सबा खातून** बनाम **मोहम्मद कासिम** ; | 29 |
| [1996] | (1996) 4 एस. सी. सी. 479 : **कीर्तिकांत डी. वडोदरिया** बनाम **गुजरात राज्य और एक अन्य** ; | 20 |
| [1988] | [1988] 4 उम. नि. प. 136 = (1988) 1 एस. सी. सी. 530 : **यमुनाबाई अनंतराव अधव** बनाम **अनंतराव शिवराम अधव और एक अन्य** ; | 18,19 |
| [1982] | [1982] 1 उम. नि. प. 413 = (1981) 2 एस. सी. सी. 509 : **मुस्समात ज़ोहरा खातून** बनाम **मोहम्मद इब्राहिम** ; | 17 |
| [1970] | [1970] 2 उम. नि. प. 532 = (1969) 3 एस. सी. सी. 802 : **नानक चंद** बनाम **चंद्र किशोर अग्रवाल और अन्य** ; | 15,16,17 |
| [1965] | ए. आई. आर. 1965 पटना 442 : **नलिनी रंजन** बनाम **किरन रानी** ; | 17 |

[1963] ए. आई. आर. 1963 इलाहाबाद 355 :
**राम सिंह** बनाम **राज्य** ; 17

[1962] [1962] 2 क्रिमिनल ला. जर्नल 528 :
**महाबीर अग्रवाल** बनाम **गीता राय** । 17

**अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2020 की दांडिक अपील सं. 615.**

2014 के सीआरएम-एम- सं. 16328 (ओ. एण्ड एम.) में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के तारीख 16 अगस्त, 2018 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

**हाजिर होने वाले पक्षकारों की ओर से** सुश्री विभा दत्ता मखीजा, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सुश्री आदित्य सिंह, शुभम सिंह, अजय रवीश, दीपकरन दलाल और करन दलाल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अशोक भूषण ने दिया ।

**न्या. भूषण** – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील अपीलार्थी, प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की पुत्री द्वारा पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के तारीख 16 अगस्त, 2018 के उस आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग, रेवाड़ी के तारीख 16 फरवरी, 2011 के आदेश तथा अपर सेशन न्यायाधीश, रेवाड़ी द्वारा तारीख 17 फरवरी, 2014 को पारित किए गए आदेश को अपास्त करने की प्रार्थना करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया था ।

3. वे संक्षिप्त तथ्य, जिनका इस अपील का विनिश्चय करने लिए उल्लेख किया जाना आवश्यक है, इस प्रकार हैं :-

3.1 प्रत्यर्थी सं. 2, अपीलार्थी की माता ने अपनी ओर से तथा अपने दो पुत्रों और अपीलार्थी-पुत्री की ओर से अपने पति प्रकाश, प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध अपने और अपने तीन बालकों के लिए भरणपोषण का

दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने तारीख 16 फरवरी, 2011 के अपने निर्णय द्वारा आवेदक सं. 1, 2 और 3 का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन आवेदन खारिज कर दिया और आवेदक सं. 4 (हमारे समक्ष अपीलार्थी) के लिए उसके वयस्क होने तक भरणपोषण मंजूर करने का आवेदन मंजूर किया ।

3.2 तारीख 16 फरवरी, 2011 के निर्णय से व्यथित होकर चारों आवेदकों ने सेशन न्यायाधीश के न्यायालय के समक्ष एक दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया और यह दांडिक पुनरीक्षण विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 17 फरवरी, 2014 के आदेश द्वारा केवल इस उपांतरण के साथ खारिज कर दिया गया कि पुनरीक्षणकर्ता सं. 4 (हमारे समक्ष अपीलार्थी) तारीख 26 अप्रैल, 2005 तक, जब वह वयस्क हो जाएगी, भरणपोषण के लिए हकदार होगी । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंध के अनुसार वे बालक जिन्होंने वयस्कता प्राप्त कर ली है भरणपोषण के हकदार हैं, यदि किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण वे अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हैं । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि पुनरीक्षणकर्ता सं. 4 (अर्थात् अपीलार्थी किसी शारीरिक, मानसिक असामान्यता या क्षति से ग्रस्त नहीं है और इसलिए वह तारीख 26 अप्रैल, 2005 तक ही अर्थात् उसके वयस्क हो जाने तक भरणपोषण की हकदार है ।

3.3 सेशन न्यायाधीश तथा न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी सहित सभी आवेदकों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन फाइल किया गया । उच्च न्यायालय ने तारीख 16 फरवरी, 2018 के आक्षेपित आदेश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को निम्नलिखित मताभिव्यक्तियां करते हुए खारिज कर दिया गया :–

> "याची सं. 1 से 3 को भरणपोषण से इनकार करने के विषय में दोनों न्यायालय संगत हैं । जहां तक विचारण न्यायालय द्वारा अभिलाषा को भरणपोषण मंजूर करने का संबंध है, इस संबंध में

आदेश को विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, रेवाड़ी द्वारा यह मत व्यक्त करते हुए उपांतरित किया गया था कि वह व्यस्कता प्राप्त करने तक भरणपोषण पाने की हकदार है और उसके पश्चात् नहीं, चूंकि वह किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति से ग्रस्त नहीं है, इन संभाव्य घटनाओं में कोई संतान जिसने यद्यपि वयस्कता प्राप्त कर ली है किंतु अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, भरणपोषण प्राप्त करने का हकदार है ।

मैं विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश रेवाड़ी द्वारा पारित किए गए निर्णय में ऐसी कोई अवैधता या कमी नहीं पाता हूं जिसके कारण इस न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप करना पड़े ।

अत: यह याचिका खारिज की जाती है ।"

3.4 यह अपील उच्च न्यायालय के निर्णय को चुनौती देते हुए फाइल की गई है ।

4. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल सुश्री विभा दत्ता मखीजा ने यह दलील दी कि यद्यपि अपीलार्थी तारीख 26 अप्रैल, 2005 को वयस्क हो गई थी किंतु चूंकि वह अविवाहित है, इसलिए वह अपने पिता से भरणपोषण के दावे की हकदार है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को इस गलत आधार पर खारिज करके गलती की है कि चूंकि अपीलार्थी वयस्क हो गई है और किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता से ग्रस्त नहीं है, इसलिए वह किसी भरणपोषण के लिए हकदार नहीं है । सुश्री मखीजा ने हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 1956" कहा गया है) के उपबंधों का अवलंब लिया और दलील दी कि धारा 20 के अनुसार किसी व्यक्ति की अपनी उस पुत्री का, जो अविवाहित है, भरणपोषण करने की बाध्यता उसके विवाहित होने तक विस्तारित है । सुश्री मखीजा ने अपनी दलील के समर्थन में **जगदीश जुग्तावत** बनाम **मंजु लता और अन्य**[1] वाले मामले में इस

[1] (2002) 5 एस. एस. सी. 422.

न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया । उन्होंने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय से प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाकर गलती की है । सुश्री मखीजा ने यह दलील दी कि अपीलार्थी अभी बेरोजगार है, इसलिए वह अपने पिता से भरणपोषण का दावा करने की हकदार है ।

5. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की दलील का खंडन करते हुए यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अपीलार्थी के भरणपोषण के दावे को तारीख 26 अप्रैल, 2005 को उसके वयस्क हो जाने तक ठीक ही सीमित किया गया था । यह दलील दी गई कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अनुसार पुत्री, जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली है, द्वारा भरणपोषण का दावा करने की हकदारी उस मामले तक सीमित है जहां ऐसा व्यक्ति किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला था कि ऐसा कोई मामला नहीं है कि अपीलार्थी किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन फाइल किए गए अपीलार्थी के आवेदन को ठीक ही खारिज किया था चूंकि न्यायिक मजिस्ट्रेट और विद्वान् पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेशों में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप करने का कोई मामला सिद्ध नहीं किया गया था ।

6. हमने पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों की दलीलों पर विचार किया और अभिलेख का परिशीलन किया ।

7. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों की दलीलों से इस अपील में विचार करने के लिए निम्नलिखित दो प्रश्न उद्भूत होते हैं :-

(i) क्या अपीलार्थी, जो यद्यपि वयस्क हो गई थी और अभी अविवाहित है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाहियों में अपने पिता से भरणपोषण का दावा करने की हकदार है यद्यपि वह किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता/ क्षति से ग्रस्त नहीं है ?

(ii) क्या विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट तथा पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के भरणपोषण के दावे को तारीख 26 अप्रैल, 2005 को उसके वयस्क हो जाने तक सीमित करते हुए पारित किए गए आदेश प्रत्यर्थी सं. 1 को इस निदेश के साथ अपास्त किए जाने योग्य हैं कि तारीख 26 अप्रैल, 2005 के पश्चात् भी तब तक अपीलार्थी को भरणपोषण देना जारी रखा जाए जब तक वह अविवाहित रहती है ?

8. दोनों प्रश्न अंत:संबद्ध होने के कारण, हम उन पर एक साथ विचार करने के लिए अग्रसर होंगे । आवेदकों द्वारा, जिनमें आवेदक सं. 4 के रूप में अपीलार्थी भी सम्मिलित है, अपीलार्थी के पिता प्रकाश के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन आवेदन तारीख 17 अक्तूबर, 2002 को फाइल किया गया था । अपीलार्थी की जन्म की तारीख 26 अप्रैल, 1987 है, इसलिए वह उस समय अवयस्क थी जब आवेदन फाइल किया गया था । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने भरणपोषण के लिए अपीलार्थी के आवेदन को उसके वयस्क हो जाने तक मंजूर किया । विद्वान् पुनरीक्षण न्यायालय ने भी इस उपांतरण के साथ निर्णय की अभिपुष्टि की कि अपीलार्थी तारीख 7 फरवरी, 2005 के बजाय तारीख 26 अप्रैल, 2005 तक, जो वह तारीख है जब वह वयस्क हो जाएगी, भरणपोषण प्राप्त करने की हकदार है । आवेदक ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन आवेदन के समर्थन में सूर्य देव पांडेय की अभि. सा. 1 के रूप में, चुन्नी लाल सैनी की अभि. सा. 2 के रूप में विकास सैनी की अभि. सा. 3 के रूप में और डाक्टर राज सैनी की अभि. सा. 4 के रूप में परीक्षा की थी । आवेदन सं. 1, 2 और 3 के दावे को नामंजूर कर दिया गया था जिसकी अभिपुष्टि निचले न्यायालयों द्वारा भी की गई थी और वह इस अपील की विषयवस्तु नहीं है ।

9. इस मामले में जिस प्रश्न का उत्तर दिया जाना है, यह है कि क्या कोई हिंदू अविवाहित पुत्री दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अपने पिता से भरणपोषण का दावा करने की हकदार केवल उसके वयस्क हो जाने तक है या वह तब तक भरणपोषण का दावा कर सकती है जब तक वह अविवाहित रहती है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1), जो इस मामले के लिए सुसंगत है, निम्नलिखित है :-

"**125. पत्नी, संतान और माता-पिता के भरणपोषण के लिए आदेश** – (1) यदि पर्याप्त साधनों वाला कोई व्यक्ति –

(क) अपनी पत्नी का, जो अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, या

(ख) अपनी धर्मज या अधर्मज अवयस्क संतान का चाहे विवाहित हो या न हो, जो अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, या

(ग) अपनी धर्मज या अधर्मज संतान का (जो विवाहित पुत्री नहीं है), जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली है, जहां ऐसी संतान किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, या

(घ) अपने पिता या माता का, जो अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है,

भरणपोषण करने में उपेक्षा करता है या भरणपोषण करने से इनकार करता है

*** *** ***"

10. आवेदक सं. 4 का भरणपोषण का दावा उस समय फाइल किया गया था जब वह अवयस्क थी । आवेदन के लंबित रहने के दौरान तारीख 26 अप्रैल, 2005 को वह वयस्क हो गई । इसलिए विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने भरणपोषण के लिए अपीलार्थी के आवेदन को तारीख 26 अप्रैल, 2005 को उसके वयस्क हो जाने तक मंजूर किया ।

11. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अपीलार्थी तब तक भरणपोषण प्राप्त करने की हकदार है जब तक वह अविवाहित रहती है किंतु उक्त दलील को केवल इस आधार पर नामंजूर कर दिया गया कि अपीलार्थी किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति से ग्रस्त नहीं है, इसलिए वह भरणपोषण के लिए हकदार नहीं है । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने जिस उपबंध का अवलंब लिया था अर्थात् हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 की धारा 20 का उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है, जिसमें अपत्यों और

वृद्ध जनकों के भरणपोषण के लिए उपबंध किया गया है, जो निम्नलिखित है :-

> "**20. अपत्यों और वृद्ध जनकों का भरणपोषण** - (1) इस धारा के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए यह है कि कोई हिंदू अपने जीवनकाल के दौरान अपने धर्मज या अधर्मज अपत्यों और वृद्ध या शिथिलांग जनकों का भरणपोषण करने के लिए आबद्ध है ।
>
> (2) जब तक कि कोई धर्मज या अधर्मज अपत्य अप्राप्तवय रहे वह अपने पिता या माता से भरणपोषण पाने के लिए दावा कर सकेगा ।
>
> (3) किसी व्यक्ति को अपने वृद्ध या शिथिलांग जनकों का या किसी पुत्री का, जो अविवाहिता हो, भरणपोषण करने की बाध्यता का विस्तार वहां तक होगा जब तक कि जनक या अविवाहिता पुत्री, यथास्थिति, स्वयं अपने उपार्जनों या अन्य संपत्ति से अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हो ।
>
> स्पष्टीकरण - इस धारा में 'जनक' में नि:संतान सौतेली-माता भी सम्मिलित है ।"

12. अधिनियम, 1956 हिंदुओं में दत्तक और भरणपोषण से संबंधित विधि का संशोधन और संहिताबद्ध करने के लिए अधिनियमित किया गया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) तथा अधिनियम, 1956 की धारा 20 के मात्र परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि जबकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में किसी संतान के भरणपोषण का दावा उस समय तक सीमित किया गया है जब तक वह वयस्क नहीं हो जाता है या हो जाती है । धारा 125(1)(ग) के फलस्वरूप कोई अविवाहित पुत्री, भले ही वह वयस्क हो गई हो, वहां भरणपोषण की हकदार है जहां ऐसी अविवाहित पुत्री किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) के अधीन स्कीम में यह अनुध्यात है कि कोई पुत्री, जो वयस्क हो गई है, उसके द्वारा किया गया भरणपोषण का दावा केवल तब ग्राह्य है जब वह किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरणपोषण करने में

असमर्थ है । प्रस्तुत मामले में, पुनरीक्षण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला था कि अपीलार्थी ऐसी किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति से ग्रस्त नहीं है जिसके कारण वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हो । उपरोक्त निष्कर्षों को हमारे समक्ष प्रश्नगत भी नहीं किया गया है । दलील यह दी गई है कि भले ही वह किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति से ग्रस्त नहीं है, तो भी अधिनियम, 1956 के फलस्वरूप वह तब तक भरणपोषण का दावा करने की हकदार है जब तक वह अविवाहित है ।

13. ऊपर यथा उल्लिखित प्रश्न का उत्तर देने के लिए, हमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की प्रकृति, विस्तार और व्याप्ति की परीक्षा करने की आवश्यकता है । दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 488 किसी व्यक्ति की पत्नी या धर्मज या अधर्मज संतान के भरणपोषण को शासित करने वाला उपबंध था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488(1) में यह उपबंधित था :-

> "488(1). यदि पर्याप्त साधन रखने वाला कोई व्यक्ति अपनी पत्नी या स्वयं अपना भरणपोषण करने में असमर्थ अपनी धर्मज या अधर्मज संतान का भरणपोषण करने में उपेक्षा करता है या भरणपोषण करने से इनकार करता है, तो जिला मजिस्ट्रेट, प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट, उपखंड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट ऐसी उपेक्षा या इनकार के साबित किए जाने पर ऐसे व्यक्ति को आदेश दे सकेगा कि वह अपनी पत्नी या ऐसी संतान के भरणपोषण के लिए कुल मिलाकर पांच सौ रुपए से अनधिक ऐसी मासिक दर से, जैसी मजिस्ट्रेट ठीक समझे, मासिक भत्ता नियत करे और उसे ऐसे व्यक्ति को दे, जिसे देने के लिए मजिस्ट्रेट समय-समय पर निदेश दे ।"

14. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 में एक सामाजिक प्रयोजन की पूर्ति के आशय सहित स्त्री और संतान की उपेक्षा को प्रतिषिद्ध करने की ईप्सा की गई थी । इस उपबंध में किसी अभित्यक्त पत्नी या असहाय संतान, धर्मज या अधर्मज, को तत्काल राहत प्राप्त करने में समर्थ बनाने हेतु संक्षिप्त कार्यवाही का उपबंध किया गया था । ये विधियां कुछ और नहीं अपितु समुदाय की सामूहिक चेतना हैं । यह

समुदाय और सामाजिक व्यवस्था के हित में है कि ऐसी स्त्री और संतान, जो उपेक्षित हैं, का भरणपोषण किया जाए और उन्हें सहारा देने हेतु तत्काल राहत अभिप्राप्त करने के लिए समर्थ बनाने हेतु एक मंच प्रदान किया जाए ।

15. **नानक चंद** बनाम **चंद्र किशोर अग्रवाल और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के पास दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 488 के उपबंध पर विचार करने का अवसर आया था । इस न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 के अधीन कार्यवाहियों की प्रकृति पर हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 के उपबंधों के प्रतिनिर्देश करते हुए विचार करना था, जिसमें अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होने का उपबंध किया गया है । अधिनियम, 1956 की धारा 4 निम्नलिखित प्रकार से है :-

> "**धारा 4. अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव** - इस अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबंधित के सिवाय, -
>
> (क) हिंदू विधि का कोई ऐसा शास्त्र-वाक्य, नियम या निर्वचन या उस विधि की भाग-रूप कोई भी रूढ़ि या प्रथा, जो कि इस अधिनियम के प्रारंभ होने से अव्यवहित पूर्व प्रवृत्त रही हो, ऐसे किसी भी विषय के बारे में जिसके लिए कि इस अधिनियम में उपबंध किया गया है, प्रभावहीन हो जाएगी ;
>
> (ख) इस अधिनियम के प्रारंभ से अव्यवहित पूर्व से प्रवृत्त किसी भी अन्य विधि का हिंदुओं को लागू होना वहां तक बंद हो जाएगा जहां तक कि वह इस अधिनियम में अंतर्विष्ट उपबंधों में से किसी से भी असंगत हो ।"

16. **नानक चंद** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह प्रश्न उद्भूत हुआ था कि क्या अधिनियम, 1956 की धारा 4 के फलस्वरूप दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 का उपबंध अध्यारोही हो जाएगा । उपरोक्त मामले में इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 तथा अधिनियम, 1956 की धारा 20 के उपबंधों को स्पष्ट किया । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 और हिंदू

---

[1] [1970] 2 उम. नि. प. 532 = (1969) 3 एस. सी. सी. 802.

दत्तक और भरणपोषण अधिनियम के बीच कोई असंगति नहीं है और दोनों एक साथ बने रह सकते हैं । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 में एक संक्षिप्त उपचार का उपबंध किया गया है और यह सभी धर्मों से संबंधित सभी व्यक्तियों पर लागू है और इसका पक्षकारों की स्वीय विधि से कोई संबंध नहीं है । पैरा 4 में निम्नलिखित अधिकथित किया गया था :–

> "4. .....विद्वान् काउंसेल का कहना है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 वहां तक जहां तक कि यह किसी हिंदू को भरणपोषण देने के लिए उपबंध करती है – भरणपोषण अधिनियम के अध्याय 3 और विशेषत: धारा 20 से, जो संतानों के भरणपोषण के लिए उपबंध करती है, असंगत है । हमारे विचार से भरणपोषण अधिनियम और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 के बीच कोई असंगति नहीं है । दोनों ही साथ-साथ चल सकते हैं । भरणपोषण अधिनियम ऐसा अधिनियम है जो हिन्दुओं में दत्तक और भरणपोषण से संबंधित विधि को संशोधित और संहिताबद्ध करता है । यह विधि पहले भी सारत: इसी प्रकार थी और किसी ने भी कभी इस बात की ओर इंगित नहीं किया कि हिंदू विधि, जैसी कि वह इस अधिनियम के प्रारम्भ से अव्यवहित पूर्व थी, और जहां तक कि वह संतानों के भरणपोषण के सम्बन्ध में लागू थी, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 से किसी भी प्रकार से असंगत है । धारा 488 एक संक्षिप्त उपचार का उपबंध करती है और वह सभी धर्मों के सभी व्यक्तियों को लागू होती है और पक्षकारों की स्वीय विधि से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है । हाल में यह प्रश्न इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष रामसिंह **बनाम** राज्य (ए. आई. आर. 1963 इलाहाबाद 355) वाले मामले में, कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष महाबीर अग्रवाल **बनाम** गीता राय [(1962) 2 क्रिमिनल ला जर्नल 528] और पटना उच्च न्यायालय के समक्ष नलिनी रंजन **बनाम** किरन रानी (ए. आई. आर. 1965 पटना 442) वाले मामले में उठा था । हमारे विचार से तीनों उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर ठीक ही पहुंचे हैं कि भरणपोषण अधिनियम की धारा 4(ख) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 में अन्तर्विष्ट उपबन्धों को किसी प्रकार निरसित या प्रभावित नहीं करती ।"

17. **नानक चंद** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **राम सिंह** बनाम **राज्य**[1] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय, **नलिनी रंजन** बनाम **किरन रानी**[2] वाले मामले में पटना उच्च न्यायालय के निर्णयों और **महाबीर अग्रवाल** बनाम **गीता राय**[3] वाले मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय का अनुमोदन किया था । **मुस्समात ज़ोहरा खातून** बनाम **मोहम्मद इब्राहिम**[4] वाले मामले में इस न्यायालय ने **नानक चंद** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस निर्णय का उल्लेख करने के पश्चात् **राम सिंह** (उपर्युक्त), **महाबीर अग्रवाल** (उपर्युक्त) और **नलिनी रंजन** (उपर्युक्त) वाले मामलों के निर्णयों के सुसंगत भागों को उद्धृत किया, जिनका **नानक चंद** (उपर्युक्त) वाले मामले में अनुमोदन किया गया था । **राम सिंह** (उपर्युक्त) मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि अधिनियम, 1956 की धारा 18 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 के स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है । **नलिनी रंजन** (उपर्युक्त) वाले मामले में पटना उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 में एक अलग उपचार का उपबंध किया गया है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 के अंतर्गत स्वीय विधि के अधीन पति का सिविल दायित्व आता है । **ज़ोहरा खातून** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय के पैरा 8, 9 और 10 को उद्धृत करना उपयोगी होगा, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं :-

> "8. यह उल्लेखनीय है कि इस न्यायालय ने ऊपर उद्धृत सम्प्रेक्षणों में वर्णित राम सिंह, महाबीर अग्रवाल और नलिनी रंजन वाले मामलों में दिए गए विनिश्चयों का अनुमोदन किया था । 1898 की संहिता की धारा 488 की समुचित परिधि को समझने के लिए, जो कि 1973 की संहिता की धारा 125 के लगभग समान है, यह आवश्यक होगा कि उन विनिश्चयों की जांच की जाए जिनके प्रति इस न्यायालय द्वारा नानक चन्द वाले मामले में अनुमोदन

---

[1] ए. आई. आर. 1963 इलाहाबाद 355.

[2] ए. आई. आर. 1965 पटना 442.

[3] 1962 (2) क्रिमिनल ला जर्नल 528.

[4] [1982] 1 उम. नि. प. 413 = (1981) 2 एस. सी. सी. 509.

सहित निर्देश किया गया था । राम सिंह बनाम राज्य और एक अन्य वाले मामले में न्यायाधिपति कैलाश प्रसाद ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था –

> 'हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से अथवा आवश्यक विवक्षा द्वारा यह सुझाव देने वाली कोई बात नहीं है कि यह अधिनियम दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 के उपबंधों को प्रतिस्थापित करने के लिए आशयित है । वास्तव में अधिनियम की धारा 18 के उपबंध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 का प्रतिस्थापन नहीं कर सकते । पश्चात्वर्ती उपबंध एक सामान्य उपबंध है और वह एक ऐसी पत्नी को लागू होता है, उसका धर्म चाहे कोई भी हो, किन्तु पूर्ववर्ती उपबंध केवल हिंदुओं के मामले में लागू होता है । इसलिए यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 का स्थान लेने के लिए आशयित नहीं था ।'

नलिनी रंजन चक्रवर्ती **बनाम** श्रीमती किरन रानी चक्रवर्ती (ए. आई. आर. 1965 पटना 442) वाले मामले में पटना उच्च न्यायालय ने इसी प्रभाव का विनिश्चय किया है जिसमें निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है –

> '1956 की अधिनियमिति से पूर्व यह सुस्थिर था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 द्वारा प्रदत्त अधिकार पक्षकारों की स्वीय विधि से स्वतन्त्र अधिकार था । धारा 488 के अधीन भरणपोषण संबंधी अधिकार पक्षकारों की राष्ट्रीयता अथवा जाति से निरपेक्ष था और एकमात्र उस अधिकार की विद्यमानता से संबंधित पुरोभाव्य शर्त किसी पत्नी की दशा में दाम्पत्य संबंधों की स्वीकृति थी । इसके अलावा, धारा 488 में परित्यक्त पत्नी अथवा परित्यक्त बालक को भुखमरी से पीड़ित होने से बचाने के विरुद्ध मजिस्ट्रेट के समक्ष केवल द्रुत उपचार तथा संक्षिप्त प्रक्रिया का उपबंध था । इस धारा में किसी पति या पिता को अपनी स्वीय विधि के अधीन अपनी पत्नी या संतान का भरणपोषण करने का सिविल दायित्व अंतर्विष्ट नहीं था ।'

9. कलकत्ता उच्च न्यायालय ने भी महाबीर अग्रवाल **बनाम** गीता राय [1962 (2) क्रिमिनल ला जर्नल 528] वाले मामले में समान दृष्टिकोण अपनाया था जिसमें निम्नलिखित मताभिव्यक्तियां की गई थीं –

> 'एक आनुकल्पिक किंतु अविसंगत संक्षिप्त उपचार के लिए उपबंध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 488 द्वारा न केवल हिंदू पत्नी के सम्बन्ध में किया गया था बल्कि यह उपबंध सामान्य रूप से सभी पत्नियों के बारे में किया गया था, उनका धर्म चाहे कुछ भी हो, ताकि पति से भरणपोषण का प्रत्युद्धरण किया जा सके । तथापि, ये दोनों उपचार सह-अस्तित्वशील नहीं थे ।'

10. इस प्रकार, ऊपर वर्णित नजीरों पर विचार करने पर यह स्पष्ट है कि 1898 की संहिता में धारा 488 के फलस्वरूप उपेक्षित पत्नियों के लिए भरणपोषण अधिनिर्णीत करने हेतु संक्षिप्त उपचार का उपबंध किया गया था चाहे पत्नियों की जाति, मत, समुदाय अथवा धर्म कुछ भी हो । न्यायालयों ने इसी संदर्भ में हिंदू दत्तक तथा भरणपोषण अधिनियम तथा अन्य समरूप अधिनियमों के प्रभाव पर ऊपर निर्दिष्ट रूप में विचार किया था ।"

18. **यमुनाबाई अनंतराव अधव** बनाम **अनंतराव शिवराम अधव और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पक्षकारों को लागू स्वीय विधि को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में विचार करने के लिए पूरी तरह अपवर्जित नहीं किया जा सकता है ।

19. **यमुनाबाई** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह प्रश्न अतंवर्लित था कि क्या कोई हिंदू स्त्री, जिसका विवाह हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के प्रवृत्त होने के पश्चात् किसी ऐसे हिंदू पुरुष के साथ हुआ है जिसकी जीवित विधिपूर्ण से विवाहित पत्नी है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरणपोषण के लिए आवेदन फाइल कर सकती है या नहीं ।

---

[1] [1988] 4 उम. नि. प. 136 = (1988) 1 एस. सी. सी. 530.

इस न्यायालय ने उपरोक्त मामले में यमुनाबाई के विवाह को आरंभ से ही अकृत और शून्य होना ठहराया था । उपरोक्त संदर्भ में, इस न्यायालय ने वैवाहिक प्रास्थिति का पता लगाने के लिए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के उपबंध को निर्दिष्ट किया । पैरा 5 और 6 में निम्नलिखित अधिकथित किया गया था :-

> "5. अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई है कि संहिता की धारा 125 में "पत्नी" शब्द का व्यापक और विस्तारित अर्थ किया जाना चाहिए ताकि उसमें विधिपूर्वक विवाहित पत्नी ही सम्मिलित न हो अपितु आवश्यक कृत्य करके अथवा विधि के अधीन अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण करके वास्तव में विवाहित स्त्री भी सम्मिलित हो सके । मोहम्मद अहमद खान **बनाम** शाह बानो बेगम {[1985] 3 उम. नि. प. 543 = [1985] 3 एस. सी. आर. 844} के मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई थी कि संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाही के पक्षकारों की स्वीय विधि विचार से पूर्णत: अपवर्जित कर दी जानी चाहिए । पति और पत्नी का संबंध विवाह-विच्छेद पर समाप्त हो जाता है किंतु विच्छिन्न विवाहित स्त्री को धारा के फायदों के लिए हकदार माना गया है और इसलिए यह दलील दी गई थी कि इस दृष्टिकोण को लागू करके उसी स्थिति की जिसमें वर्तमान अपीलार्थी है, स्त्री को धारा की परिधि में लाया जाना चाहिए । हमें यह खेद है कि यह तर्क सुआधारित नहीं है । विच्छिन्न विवाह स्त्री को स्पष्टीकरण के खंड (ख) के कारण धारा में सम्मिलित किया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की तत्स्थानी धारा 488 के कारण स्थिति भिन्न थी । विच्छिन्न विवाह स्त्री संक्षिप्त उपचार का लाभ नहीं ले सकती । भरणपोषण के लिए पत्नी का अधिकार उसकी वैवाहिक हैसियत के बने रहने पर निर्भर करता है । **शाह बानो** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह बतलाया गया था कि चूंकि वह अधिकार मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन उसे एक तरफा तलाक दे करके पति द्वारा विफल किया जा सकता है अथवा विधि की किसी अन्य पद्धति के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री प्राप्त करके भी

विफल किया जा सकता है । इसलिए किसी विच्छिन्न विवाह स्त्री को, जब तक कि वह पुनर्विवाह नहीं करती है, धारा के उपबंधों का फायदा विस्तारित करके कठिनाई को दूर करना वांछनीय नहीं करती है, धारा के उपबंधों का फायदा विस्तारित विवाह स्त्री को, जब तक कि वह पुनर्विवाह नहीं करती है, धारा के उपबंधों का फायदा विस्तारित करके कठिनाई को दूर करना वांछनीय समझा गया था और वह उद्देश्य स्पष्टीकरण में खंड (ख) सम्मिलित करके पूरा किया गया था । दुर्भाग्य से अपीलार्थी के लिए ऐसा कोई तत्स्थानी उपबंध ध्यान में नहीं लाया गया है जो उसे लागू किया जा सके । विधानमंडल ने स्पष्ट शब्दों द्वारा किसी अधर्मज शिशु को भी धारा का फायदा देने का विनिश्चय किया है । किंतु ऐसे कोई भी शब्द नहीं हैं जो वस्तुत: पत्नी को लागू किए जा सकें जहां विवाह आरंभ से ही शून्य हो ।

6. पक्षकारों को लागू होने वाली स्वीय विधि को विचार से पूर्णत: अपवर्जित करने के प्रयत्न को भी अस्वीकार किया जाना चाहिए । धारा पत्नी के हित में अधिनियमित की गई है और किसी भी व्यक्ति को जो उपधारा (1)(क) के अधीन फायदा प्राप्त करना चाहता है इस अनिवार्य शर्त को सिद्ध करना होगा कि वह संबंधित व्यक्ति की पत्नी है । यह विवाद्यक पक्षकारों को लागू होने वाली विधि के प्रति निर्देश करके ही विनिश्चित किया जा सकता है । यह बात केवल वहां ही किया जा सकता है जहां आवेदक स्वीय विधि के प्रतिनिर्देश से संबंध के बारे में अपनी इस हैसियत को सिद्ध करता हो कि भरणपोषण के लिए आवेदन कायम रखा जा सकता है । एक बार धारा के अधीन अधिकार उसमें उल्लिखित आवश्यक शर्तों के सबूत द्वारा सिद्ध हो जाने पर वह स्वीय विधि के प्रति और निर्देश द्वारा विफल नहीं किया जा सकता । इस विवाद्यक का, कि क्या धारा लागू होती है अथवा नहीं, उत्तर पक्षकारों को लागू होने वाली समुचित विधि के प्रति निर्देश करने के सिवाय नहीं दिया जा सकता । हमारे मत से **शाह बानो** (उपर्युक्त) वाले मामले का निर्णय अपीलार्थी की सहायता नहीं करता है । यह मत व्यक्त किया जा सकता है कि विच्छिन्न विवाह स्त्री और अधर्मज शिशु

की धारा का फायदा विस्तारित करने के प्रयोजन के लिए संसद् ने उस आशय का विनिर्दिष्ट उपबंध धारा में सम्मिलित करना आवश्यक समझा है किन्तु ऐसी स्त्री के संबंध में इस प्रकार नहीं किया है जो विधिपूर्वक विवाहित नहीं है ।"

20. यह उल्लेखनीय है कि उपरोक्त मामले में स्वीय विधि पर यह पता लगाने के लिए विचार किया गया था कि क्या अपीलार्थी यमुनाबाई द्वारा उसकी पत्नी होने का दावा करते हुए फाइल किया गया आवेदन संधार्य था या नहीं । एक अन्य निर्णय जिसका उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है, वह **कीर्तिकांत डी. वडोदरिया** बनाम **गुजरात राज्य और एक अन्य**[1] वाला मामला था । इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया प्रश्न यह था कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की उपधारा (1) के खंड (घ) में प्रयुक्त "माता" अभिव्यक्ति में सौतेली-माता सम्मिलित है या नहीं । इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 तथा अधिनियम, 1956 की धारा 20 के उपबंध को निर्दिष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि सौतेली-माता अपने सौतेले पुत्र से भरणपोषण का दावा कर सकती है बशर्ते वह अपने पति की विधवा है, जीवित है और अपना भरणपोषण करने और अपने को संभालने में भी असमर्थ है ।

21. अब हम अपीलार्थी की ओर से अवलंब लिए गए इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के निर्णय अर्थात् **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले पर आते हैं । उपरोक्त मामले में, प्रत्यर्थी सं. 3 याची की एक अवयस्क अविवाहित बालिका थी । याची की पत्नी अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 3 की माता ने प्रत्येक आवेदक के लिए 500/- रुपए प्रति माह की दर से भरणपोषण का दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था, जिसे कुटुंब न्यायालय द्वारा मंजूर किया गया था । उच्च न्यायालय के समक्ष इस आदेश को चुनौती देते हुए एक पुनरीक्षण फाइल किया गया, जिसमें यह प्रतिवाद किया गया कि प्रत्यर्थी सं. 3 कुमारी राखी केवल उसके वयस्क होने तक भरणपोषण की हकदार थी और उसके पश्चात् नहीं । उच्च

---

[1] (1996) 4 एस. सी. सी. 479.

न्यायालय ने यद्यपि इस विधिक स्थिति को स्वीकार किया कि कोई अवयस्क पुत्री दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अपने माता-पिता से भरणपोषण के लिए हकदार केवल उसके वयस्क होने तक है किंतु हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम की धारा 20(3) का अनुसरण करते हुए कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेशों में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया । मामले के तथ्य और उच्च न्यायालय की मताभिव्यक्तियां निर्णय के पैरा 2 में दिए गए हैं जो कि निम्नलिखित प्रकार हैं :–

> "2. याची, इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 3 कुमारी राखी, जो एक अवयस्क अविवाहित बालिका है, का पिता है । प्रत्यर्थी सं. 1, याची की पत्नी और प्रत्यर्थी सं. 3 की माता द्वारा स्वयं अपने और अपने दो बालकों के लिए भरणपोषण का दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर विचार करते हुए कुटुंब न्यायालय ने तारीख 22 जुलाई, 2000 के आदेश द्वारा प्रत्येक आवेदक को 500/- रुपए प्रति माह की दर से भरणपोषण मंजूर किया था । इस मामले में याची ने कुटुंब न्यायालय के आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका, अन्य बातों के साथ-साथ, इस आधार पर फाइल की कि प्रत्यर्थी सं. 3 केवल उसके वयस्क होने तक भरणपोषण के लिए हकदार थी और उसके पश्चात् नहीं । इस मुद्दे पर विचार करते हुए उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इस विधिक स्थिति को स्वीकार किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन कोई अवयस्क पुत्री अपने माता-पिता से भरणपोषण की हकदार केवल उसके वयस्क होने तक है, किंतु हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम की धारा 20(3), जिसमें अवयस्क पुत्री को उसके विवाह होने तक भरणपोषण का अधिकार दिया गया है, का अनुसरण करते हुए कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया । विद्वान् एकल न्यायाधीश कार्यवाहियों की बारम्बारता को ध्यान में रखते हुए कुटुंब न्यायालय के आदेश को कायम रखने के लिए प्रेरित हुए

थे । उच्च न्यायालय के निर्णय का सुसंगत भाग यहां उद्धृत किया जाता है –

> 'इस प्रकार, उपरोक्त को देखते हुए यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता है कि आक्षेपित आदेश माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रतिकूल है, तो भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंध स्वीय विधि को ध्यान में लाए बिना लागू होते हैं और इसमें ऐसा कोई प्रभेद नहीं किया गया है कि भरणपोषण का दावा करने वाली पुत्री हिंदू है या मुस्लिम । तथापि, मामले में एक समग्र दृष्टिकोण अपनाते हुए, मेरा, माननीय न्यायालय के प्रति ससम्मान, स्पष्ट मत है कि इन उपबंधों का शाब्दिक निर्वचन किया जाना चाहिए और पुत्री के वयस्क हो जाने पर वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन उपबंधों का फायदा मिलना बंद हो जाएगा, यद्यपि वह कानून/स्वीय विधि के अधीन आगे फायदों का दावा करने की हकदार होगी । किंतु यह न्यायालय हस्तक्षेप करने के लिए तैयार नहीं है, क्योंकि आदेश के परिणामस्वरूप न्याय की हानि नहीं होती है, बल्कि आदेश में हस्तक्षेप करने से प्रत्यर्थी सं. 3 के लिए अत्यधिक कठिनाई पैदा होगी क्योंकि और आगे भरणपोषण आदि के लिए उसे 1956 के अधिनियम की धारा 20 की उपधारा (3) के अधीन एक अन्य याचिका फाइल करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा । अत: मुकदमेबाजी की बारम्बारता से बचने के लिए आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है ।'"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

22. **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का निर्णय अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल का अवलंब है । **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए जो प्रश्न आया था, उसका उल्लेख निर्णय के पैरा 3 में किया गया है जो निम्नलिखित प्रकार से है :–

"3. उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्ष और की गई मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह उद्भूत होता है कि क्या आदेश में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता है । .....।"

23. इस न्यायालय ने यथा उपरोक्त पैरा 3 में उल्लिखित प्रश्न का उत्तर पैरा 4 में निम्नलिखित शब्दों में दिया है :-

"4. प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में सिद्धांत को लागू करते हुए, यह स्पष्ट है कि किसी अवयस्क लड़की का वयस्क हो जाने के पश्चात् उसका विवाह होने तक अपने माता-पिता से भरणपोषण का अधिकार हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम की धारा 20(3) में मान्यताप्राप्त है । इसलिए कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित आदेश, जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 और हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम की धारा 20(3) के संयुक्त पठन पर आधारित है, को संधार्य रखने के लिए विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय/आदेश से असहमति व्यक्त नहीं की जा सकती है । पूर्वोल्लिखित कारणों से हमारा यह मत है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है ।"

24. उपरोक्त मामले में, कुटुंब न्यायालय द्वारा भरणपोषण मंजूर करते हुए एक आदेश पारित किया गया था जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 और अधिनियम, 1956 के संयुक्त पठन पर आधारित था । यद्यपि, उच्च न्यायालय और इस न्यायालय ने अधिनियम, 1956 की धारा 20(3), जिसमें अवयस्क पुत्री को भरणपोषण का अधिकार उसके विवाह होने तक दिया गया है, का अनुसरण करते हुए कुटुंब न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था किंतु **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय को यह विनिश्चयाधार अधिकथित करने के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है कि पुत्री द्वारा अपने पिता के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन फाइल की गई कार्यवाहियों में वह अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) में अंतर्विष्ट अनुसार पिता के अपनी विवाहित पुत्री के भरणपोषण

के दायित्व का अवलंब लेते हुए भरणपोषण की हकदार है । उच्च न्यायालय दांडिक पुनरीक्षण अधिकारिता का प्रयोग करते हुए निचले न्यायालयों के उस निर्णय में हस्तक्षेप करने से सचमुच इनकार कर सकता था जिसके द्वारा अविवाहित पुत्री को भरणपोषण मंजूर किया गया था । यह न्यायालय उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के विरुद्ध दांडिक अपील पर सुनवाई करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर रहा था और उस मामले के तथ्यों में इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था, किंतु इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने से किए गए इनकार को **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले में के निर्णय को विनिश्चयाधार के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है, जैसी कि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दलील दी गई है ।

25. संहिताकरण से पूर्व, प्राचीन हिंदू विधि में हिंदू पुरुष को अपने वृद्ध माता-पिता, सच्चरित्र पत्नी और किशोर संतान का भरणपोषण करने के लिए सदैव नैतिक और विधिक रूप से दायी ठहराया गया था । हिंदू विधि में सदैव अविवाहित पुत्री के भरणपोषण के पिता के दायित्व को मान्यता दी गई है । इस संदर्भ में, हम मुल्ला – हिंदू विधि – 22वें संस्करण के पैरा 539 और 543 को निर्दिष्ट करेंगे, जो निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "**539. व्यक्तिगत दायित्व : पिता, पति और पुत्र का दायित्व** – कोई हिंदू अपनी पत्नी, अपने अवयस्क पुत्रों, अपनी अविवाहित पुत्रियों और अपने वृद्ध माता-पिता का भरणपोषण करने के लिए एक विधिक बाध्यता के अधीन है, चाहे उसके पास कोई संपत्ति है या नहीं । इन नातेदारों का भरणपोषण करने की बाध्यता व्यक्तिगत स्वरूप की है और पक्षकारों के बीच संबंध की विद्यमानता से ही उद्भूत होता है ।
>
> हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 की धारा 18 और 20 पत्नी, संतान और वृद्ध माता-पिता के भरणपोषण के प्रश्न के संबंध में है । उन धाराओं के अधीन टिप्पणों के प्रति निर्देश किया जा सकता है ।

**543. पुत्री** – कोई पिता अपनी अविवाहित पुत्रियों का भरणपोषण करने के लिए आबद्ध है । पिता की मृत्यु होने पर, वे उसकी संपदा में से भरणपोषण दिए जाने की हकदार हैं ।

*** *** ***।"

26. मुस्लिम विधि में भी पिता की अपनी पुत्रियों का तब तक भरणपोषण करने की बाध्यता को मान्यता दी गई है जब तक उनका विवाह नहीं हो जाता है । **हरियाणा राज्य और अन्य** बनाम **संतरा (श्रीमती)**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने मुस्लिम विधि के मुल्ला के सिद्धांत को निर्दिष्ट करते हुए पैरा 40 में यह अभिनिर्धारित किया था :–

"40. इस प्रकार, मुस्लिम विधि के अधीन कोई पिता अपने पुत्रों का तब तक भरणपोषण करने के लिए आबद्ध है जब तक उन्होंने यौवनागम की आयु प्राप्त न कर ली हो । वह अपनी पुत्रियों का भी तब तक भरणपोषण करने के लिए आबद्ध है जब तक उनका विवाह नहीं हो जाता है [मुस्लिम विधि के मुल्ला के सिद्धांत (19वां संस्करण) पृष्ठ 300].....।"

27. हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) कुछ और नहीं अपितु संतान और वृद्ध माता-पिता के भरणपोषण से संबंधित हिंदू विधि के सिद्धांतों को मान्यता देने के लिए है । धारा 20(3) में अब हिंदू पुरुष या स्त्री की अपनी उस पुत्री का भरणपोषण करने की कानूनी बाध्यता बनाई गई है, जो अविवाहित है और स्वयं अपनी आजीविका या अन्य संपत्ति से अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है ।

28. हिंदू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 की धारा 20 में हिंदू व्यक्ति पर अपनी उस पुत्री का, जो अविवाहित है और अपनी आजीविका या अन्य संपत्ति से अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, भरणपोषण करने की बाध्यता डाली गई है । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अधिनियम, 1956 के अधिनियमन से पूर्व हिंदू विधि में

---

[1] (2000) 5 एस. सी. सी. 182.

हिंदू व्यक्ति पर अपनी अविवाहित पुत्री, जो अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, का भरणपोषण करने की सदैव बाध्यता रही है । जो बाध्यता पिता पर अपनी उस अविवाहित पुत्री का भरणपोषण करने के लिए डाली गई है, यदि वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, उस बाध्यता को पुत्री द्वारा धारा 20 के अधीन अपने अधिकार को प्रवर्तित करते हुए अपने पिता के विरुद्ध प्रवर्तित किया जा सकता है ।

29. हम **नूर सबा खातून** बनाम **मोहम्मद कासिम**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के एक अन्य निर्णय का भी उल्लेख कर सकते हैं, जो मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन था । एक मुस्लिम पत्नी ने अपनी दो पुत्रियों और एक पुत्र के सहित भरणपोषण का दावा करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था । विचारण न्यायालय ने पत्नी और बालकों को उसके पति से भरणपोषण मंजूर किया । पति ने पत्नी को तलाक देने के पश्चात् मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 के उपबंधों को देखते हुए विचारण न्यायालय में आदेश का उपांतरण करने की ईप्सा करते हुए आवेदन फाइल किया । विचारण न्यायालय ने आदेश को, जहां तक इसका संबंध पत्नी को भरणपोषण मंजूर करने से था, उपांतरित किया किंतु तीनों अवयस्क बालकों के भरणपोषण के आदेश को कायम रखा । पति ने पुनरीक्षण के माध्यम से उस आदेश को चुनौती दी, जो पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय में एक आवेदन फाइल किया गया । उच्च न्यायालय ने पति के दावे को स्वीकार किया और अधिनियम, 1986 की धारा 3(1)(ख) के उपबंध का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि मुस्लिम पत्नी अपने पूर्व पति से अपने बालकों के लिए भरणपोषण के दावे की हकदार संबंधित बालक की जन्म की तारीख से केवल दो वर्ष की अवधि के लिए है । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अवयस्क संतान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरणपोषण के हकदार नहीं थी । निर्णय को चुनौती देते हुए अपील के लिए एक विशेष इजाजत याचिका

---

[1] (1997) 6 एस. सी. सी. 233.

फाइल की गई । इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 तथा अधिनियम, 1986 पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 जैसे फायदाप्रद विधान को किसी कानून के स्पष्ट उपबंधों के माध्यम के सिवाय विफल नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दो उपबंधों के बीच कोई विरोध नहीं है ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

30. इस न्यायालय ने मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 3 और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंधों का उल्लेख किया । इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त निर्णय के पैरा 7 में की गई निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों को निर्दिष्ट करना सुंसगत है :–

> "7. ..... दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन पिता पर (उसके धर्म को विचार में लाए बिना) संतान का भरणपोषण करने की बाध्यता है और जब तक वह ऐसा करने की स्थिति में है और संतान का स्वयं अपना कोई स्वतंत्र साधन नहीं है, तब तक उनके लिए इसकी व्यवस्था करने की पूर्ण बाध्यता बनी रहती है । जहां तक मुस्लिम माता-पिता से जन्मी संतान का संबंध है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में ऐसी कोई बात नहीं है जो मुस्लिम पिता को संतान का भरणपोषण करने की उसकी बाध्यता से छूट देती हो । ये उपबंध 1986 के अधिनियम की धारा 3(1) के खंड (ख) द्वारा प्रभावित नहीं हैं और वास्तव में संतान को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के फायदे से केवल इस आधार पर इनकार करना कि वे मुस्लिम माता-पिता से जन्मी हैं, अयुक्तियुक्त, अनुचित, असाम्य और हास्यास्पद होगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 जैसे फायदाप्रद विधान के प्रभाव को किसी कानून के स्पष्ट उपबंधों के माध्यम के सिवाय विफल किया जाना अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है । हम 1986 के अधिनियम में किसी ऐसे आशय का प्रकटीकरण नहीं पाते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन ऐसी संतान के भरणपोषण का दावा करने के स्वतंत्र

अधिकारों को छीना गया हो, जहां वे अवयस्क हैं और अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हैं । एक हिंदू पिता की तरह ही मुस्लिम पिता की अपनी अवयस्क संतान का भरणपोषण करने की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में यथा अंतर्विष्ट बाध्यता आत्यंतिक है और 1986 के अधिनियम की धारा 3(1)(ख) द्वारा कतई प्रभावित नहीं होती है । .....।"

31. अधिनियम, 1956 की धारा 20 के उपबंध में हिंदू पर अपनी ऐसी अविवाहित पुत्री का भरणपोषण करने की स्पष्ट कानूनी बाध्यता डाली गई है, जो अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । धारा 20 के अधीन अविवाहित पुत्री का अपने पिता से भरणपोषण का दावा करने का अधिकार, जब वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है, आत्यंतिक है और धारा 20 के अधीन अविवाहित पुत्री को दिया गया अधिकार स्वीय विधि के अधीन प्रदान किया गया अधिकार है जिसे उसके द्वारा अपने पिता के विरुद्ध भली-भांति प्रवर्तित किया जा सकता है । **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय में यह अधिकथित किया गया है कि अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) में किसी अवयस्क लड़की के वयस्क होने जाने के पश्चात् अपने विवाह तक अपने पिता से भरणपोषण का दावा करने के अधिकार को मान्यता दी गई है । अविवाहित पुत्री अपना विवाह हो जाने तक अपने पिता से भरणपोषण के लिए स्पष्ट रूप से हकदार है भले ही वह वयस्क हो गई हो, जो कि धारा 20(3) के अधीन मान्यताप्राप्त एक कानूनी अधिकार है और अविवाहित पुत्री द्वारा इसे विधि के अनुसार प्रवर्तित किया जा सकता है ।

32. कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 के अधिनियमन के पश्चात्, कुटुंब न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 9 के अधीन पत्नी, संतान और माता-पिता के भरणपोषण के लिए आदेश से संबंधित प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा प्रयोक्तव्य अधिकारिता भी होगी । कुटुंब न्यायालयों को केवल उस शहर या नगर की बाबत अधिकारिता होगी जिसकी जनसंख्या दस लाख से अधिक है, जहां कोई कुटुंब न्यायालय नहीं है वहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाहियां

प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट के समक्ष की जाएंगी । ऐसे क्षेत्र में जहां कुटुंब न्यायालय स्थापित नहीं किया गया है, भरणपोषण के लिए वाद या कार्यवाहियां जिसमें अधिनियम, 1956 की धारा 20 के अधीन कार्यवाहियां भी हैं, केवल जिला न्यायालय या किसी अधीनस्थ सिविल न्यायालय के समक्ष की जाएंगी ।

33. ऐसा मामला हो सकता है जहां कुटुंब न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन मामले तथा अधिनियम, 1956 की धारा 20 के अधीन वाद का विनिश्चय करने की अधिकारिता हो, ऐसी स्थिति में, कुटंब न्यायालय दोनों अधिनियमों के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर सकता है और समुचित मामले में अविवाहित पुत्री को भरणपोषण मंजूर कर सकता है भले ही वह अधिनियम, 1956 की धारा 20 के अधीन अपने अधिकार को प्रवर्तित करते हुए वयस्क हो गई हो जिससे कि कार्यवाहियों की बारम्बारता से बचा जा सके, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **जगदीश जुग्तावत** (उपर्युक्त) वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है । तथापि, मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए ऐसा आदेश पारित नहीं कर सकता है ।

34. हमारे समक्ष मामले में, आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम वर्ग, रेवाड़ी के समक्ष फाइल किया गया था जिसने तारीख 16 फरवरी, 2011 का आदेश पारित किया था । मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाहियों का विनिश्चय करते हुए अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) के अधीन अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकता था और अपीलार्थी की इस दलील को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि निचले न्यायालय को भरणपोषण का आवेदन मजूंर करना चाहिए था भले ही अपीलार्थी वयस्क हो गई थी । हम न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम वर्ग तथा विद्वान् अपर मजिस्ट्रेट के अपीलार्थी, जो वयस्क हो गई थी, को भरणपोषण मंजूर न करने के आदेश में कोई कमी नहीं पाते हैं ।

35. अधिनियम, 1956 के अधीन यथा अनुध्यात भरणपोषण की धारणा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरणपोषण की धारणा की तुलना में एक बृहत्तर धारणा है । धारा 3(ख) में भरणपोषण

को परिभाषित करते हुए एक समावेशी परिभाषा, जिसमें विवाह का व्यय भी सम्मिलित है, निम्नलिखित शब्दों में दी गई है :-

> "**3. परिभाषा** - इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो -
>
> *** *** ***
>
> (ख) 'भरणपोषण' के अंतर्गत -
>
> (i) सब दशाओं में भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा और चिकित्सा परिचर्या और इलाज के लिए उपबंध आता है ;
>
> (ii) अविवाहित पुत्री की दशा में उसके विवाह के युक्तियुक्त और प्रासंगिक व्यय भी आते हैं ;
>
> (iii) 'अप्राप्तवय' से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने अपनी अठारह वर्ष की आयु पूरी न की हो ।"

36. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का प्रयोजन और उद्देश्य आवेदक को संक्षिप्त कार्यवाहियों में तुरंत अनुतोष प्रदान करना है, जबकि अधिनियम, 1956 की धारा 3(ख) के साथ पठित धारा 20 के अधीन अधिकार में बृहत्तर अधिकार अंतर्विष्ट है जिसका सिविल न्यायालय द्वारा अवधारण करने की आवश्यकता होती है, इसलिए धारा 20 के अधीन यथा उपबंधित बृहत्तर दावों के लिए कार्यवाहियां अधिनियम की धारा 20 के अधीन आरंभ किए जाने की आवश्यकता होती है और विधानमंडल ने कभी भी मजिस्ट्रेट पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अधिनियम, 1956 द्वारा अनुध्यात दावों का अवधारण करने के लिए यह भार डालना अनुध्यात नहीं किया था ।

37. तीन और कारण हैं जिनकी वजह से हमारा यह समाधान हो जाता है कि विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट तथा पुनरीक्षण में विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेशों में उच्च न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग

करते हुए हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित नहीं था । ये कारण निम्नलिखित हैं :-

(i) अपीलार्थी की माता द्वारा वर्ष 2002 में अपनी ओर से तथा अपने दो पुत्रों और अपीलार्थी, जो उस समय अवयस्क थी, की ओर से भरणपोषण के लिए आवेदन फाइल किया गया था । तारीख 17 अक्तूबर, 2002 को जब आवेदन फाइल किया गया था, उस समय अपीलार्थी के अवयस्क होने के कारण अपीलार्थी की ओर से ऐसा कोई अभिवाक् करने का कोई अवसर नहीं था कि वह वयस्कता प्राप्त करने के पश्चात् भी अपना भरणपोषण करने में समर्थ नहीं है । अधिनियम, 1956 की धारा 20, जिसका अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा किसी व्यक्ति द्वारा अपनी अविवाहित पुत्री का भरणपोषण करने के अधिकार को मान्यता देते हुए अवलंब लिया है, इस शर्त के अध्यधीन है जब "यथा स्थिति, माता-पिता अपना या अविवाहित पुत्री अपना भरणपोषण अपनी स्वयं की आजीविका या अन्य संपत्ति में से" करने में असमर्थ है । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी की इस दलील की अवेक्षा की थी कि अपीलार्थी यह दावा करने के लिए कि वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है तब भी कठघरे में नहीं आई थी जब वह वयस्क हो गई थी और इस दलील का उल्लेख विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के निर्णय के पैरा 12 में किया गया है ।

(ii) विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के निर्णय से एक अन्य तथ्य, जिसका उल्लेख किया जाना सुसंगत है, यह आया है कि आवेदक सं. 2 से 4 ने, जिनमें अपीलार्थी भी सम्मिलित है, अधिनियम, 1956 की धारा 20 के अधीन कार्यवाहियां 2001 के वाद सं. 6 द्वारा फाइल की थीं जिसे वापस ले लेने के आधार पर तारीख 17 दिसम्बर, 2012 को खारिज कर दिया गया था ।

(iii) एक अन्य पहलू, जिसका उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है, यह है कि इस अपील में फाइल किए गए प्रतिशपथपत्र में प्रत्यर्थी का यह एक विनिर्दिष्ट अभिवाक् था कि अपीलार्थी के नाम पर 214 वर्ग गज माप का एक भूखंड खरीदा

गया था । अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए प्रत्युत्तर शपथपत्र में यह स्वीकार किया गया था कि यह भूखंड तारीख 31 जुलाई, 2000 को अपीलार्थी की माता और पिता द्वारा अर्जित संयुक्त आय से खरीदा गया था और जिसे वर्ष 2012 में कुल 11,77,000/- रुपए के विक्रय प्रतिफल पर बेचे जाने का करार किया गया था । प्रत्युत्तर शपथपत्र में, अपीलार्थी द्वारा भावी क्रेता का एक शपथपत्र फाइल किया गया था, जिसमें यह उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी और अर्जुन के बीच तारीख 31 जुलाई, 2000 को 11,77,000/- रुपए के विक्रय प्रतिफल के लिए विक्रय करार हुआ था, जिसमें से अपीलार्थी ने अग्रिम धन के रूप में 10,89,000/- रुपए प्राप्त किए थे ।

38. अत: हम अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की इस दलील को स्वीकार करते हैं कि विधि की प्रतिपादना के रूप में, अविवाहित हिंदू पुत्री अपने पिता से उसका विवाह होने तक अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) का अवलंब लेते हुए भरणपोषण का दावा कर सकती है, बशर्ते वह यह अभिवाक् करे और साबित करे कि वह अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है और इस अधिकार के प्रवर्तन के लिए उसका आवेदन/वाद अधिनियम, 1956 की धारा 20 के अधीन होना चाहिए ।

39. प्रस्तुत मामले के तथ्यों में अपीलार्थी को अपने पिता के विरुद्ध किसी भरणपोषण का दावा करने के लिए अधिनियम, 1956 की धारा 20(3) का आश्रय लेने, यदि उसे ऐसी सलाह दी जाती है, की स्वतंत्रता देने से न्याय के उद्देश्य की पूर्ति हो जाएगी । यथा उपरोक्त स्वतंत्रता के अध्यधीन यह अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.